

बाजो । परस्पर जयरुघनाथजी की कर सवार आगे च
 कृपक मन में विचारने लगा कि राठोड़ तो म्हाका स
 छै, म्हाको फूमो नाम और यां कह्यो नाहरभिंह नाम
 तब कृपकने पीछे से पुकारा, सवार ने सोचा कि मारग
 भूल होवेला तब पीछा आया । अब वह गरूर का म
 हुवा बोला सुणो सगा म्हाको नाम नो वाघ, तेहरे चीत
 ओडो भर विच्छू, फूंफूं करता दो सांप, इतना सुनके
 राठोड़ क्रोधित हो म्यान से तलवार निकाली । कृपक त
 लवार को देख भगा और भगता हुवा बोला ना ठांका
 मारजो मत थांने गोविंदजी की और घनश्याम धर्णी व
 आण 'छै मेरो यो नाम तो भूवा रांड मराचा के तो
 कढायो छो म्हाको सागे नाम तो फिसकणियो छै" । य
 हाल उक्त नाम का समझो । फिर एक मालिक के द
 पहरेदार नाँकर थे एक राजपूत और दूसरा मुसलमान
 राजपूत ने पूछा मियां तेरो के नाम है, मियां ने कह
 कुतबअली खां । रातको पहग बदलने जब राजपूत
 पुकारा अरे कुत्ता बिल्ली खां, कुत्ता बिल्ली खां तो
 गुस्से में हो बोला कि अवे रंगड़ ऐसा क्या बकता
 मेरा नाम तो कुतबअली खां है । राजपूत बोला हूं म
 यूं ही कहूं हूं, "तेरे मेरे बोली को फरक, थे कहो फरि
 म्हे कइवां जरक" । बात तो वाकी वा है, आपके ।

लेख पढ़ गुरु दादा साहब के भक्त आपके नाम के पीछे
अकीयोजना विशेष लगायेंगे ।

दोहा-ज्ञानसुन्दरजी नाम में, नहीं ज्ञान का लेश ।

गुरुजन के निंदक प्रबल, हृदय भरा है द्रव ॥

लोग आपको ज्ञानसुन्दरजी साधुजी कहते होंगे ।

परन्तु लांकोक्ति तो विलक्षण ही है । जैसे:—

दोहा-जगतण को भगतण कहे, कहे चोर को शाह
चलती को गाड़ी कहे, यही जगत की राह ॥

आपकी कृती जैसे कोई मनुष्य भक्त बन अपने पूज्य
के नाक पर बैठी मक्खी को जूती में उड़ावे, उसे बुद्धि-
मान क्या समझें । इस प्रकार मेजरनामा लिख तपासंत्रेगी
संवेगणियों की, और अपने प्रथम करे गुरु २२ समुदाय
के पूज्य श्रीलालजी की निंदारूप पुष्पमाला परम पूज्य
रत्नप्रभसूरिः के गले में पहनाइ, दूमरी खरतरगच्छाचार्य
दादा गुरुदेवों की निंदारूप पुष्पमाला उनके गले में डाली
है । भक्त हो तो ऐसे हो । किमी का आटा कुत्ता खाता
हो देखने वाले का नुकमान तो नहीं लेकिन विघंकी अ-
नुचित समझ अवश्य उस कृत्ते को दूतकारेगा । दुष्ट बुद्धि
वाला पराये का नुकशान में खुश होता है । इस मुजब
हम तो ऐसी पुष्पमालों की बुरी समझी है ।

प्रागे ८४ गच्छ में कई २ आचार्य प्रभावक हेम-

चन्द्रमूरिः आदि हो चुके हैं । जिन आचार्य का रचा शब्दानुशासन जैनधर्म का गौरव दिखा रहा है कलिकाल सर्वज्ञ उनको कहते हैं । इनमें पहले सलग्न सरतरगच्छा-चार्य जिनवल्लभमूरिः ५२ गौत्र प्रतिबोधक सवालाख घर जिनधर्म त्याग वां विधर्मी होगये थे ऐसे राजन्यवंशी आदि का ओमवाल बनाने वाले दस हजार राजपूतों को मोट्टेरा नगर में जिनधर्मी बनाने वाले मोठ बनिया कहावे हैं, दादा श्रीजिनदत्तमूरिः अनेक राजन्यवंशी प्रतिबोधक मणिधारी श्रीजिनचन्द्रमूरिः ५० हजार राजन्यवंशियों के प्रतिबोधक दादा श्रीजिनकृशलमूरिः ऐसे ओमवाल वंश के वृद्धिकारक अनेक सरतराचार्य हुए, महाप्रभाविक होने से इन्हीं को ८४ गच्छ शृंगारहार कहने में अन्युक्ति नहीं । क्योंकि इनके प्रतिबोधे आचकों से सब बेपधारी निर्वाह करते हैं, मीजे को मीजाने में तारीफ नहीं । तारीफ विचर्मी दूर्यों को पुनः जिनधर्मी बनाने वालों की है, श्रीर श्रीर गच्छ के जेनाचार्यो ने भी कतिपय को जिनधर्मी बनाये हैं, जैसे किमी नामी प्रभाविक जेनाचार्य ने ओमिया नगरी मारवाड़ में वि० संवत् १०० के पीछे ओमवाल बनाये हैं, वह रत्नप्रममूरिः नहीं किन्तु अन्य गच्छी आचार्य थे । प्रमाण मिलने से नाम प्रगट किया जायगा इस समय कोई रत्नप्रमाचार्य नहीं हुए हैं, वह आगे प्र-

माण लिखा है । वेद कहलाने वाले १ गोत्र के कईएक कुंअलागच्छ के पाबंद हुए जिसका कारण आग्नेय है । संवत् ६०० के पहले आंमवाल जाति का पतन मिलता है । शिला लेख मूर्ति के लेखों से वि० सं० २०० में वर्द्धमानसुरिः वस्तिशोधक के शिष्य जिनेश्वर को खरतर विरुद्ध मिला । वह संवत् ११०२ में निक गये । संवत् ११०० से खरतरगच्छ प्रतिबोधक १५०० ने नगर २ में अपने घर्माचार्य गुरु की स्थापना पूजन स्मरण कर दोनों भव का लाभ उठा रहे हैं ।

गयवरचन्दजी भर्तृहरि के इस श्लोक पर कटिबद्ध हुए मालुम दते हैं ।

यत यस्यास्तिविज्ञंस नरः कुलीनः

सएव वक्ता सचदर्शनीयः ।

संपंडितः सश्रुतवान् गुणज्ञः

सर्वेगुणाकांचिनमा श्रयन्ते ॥१॥

अर्थ—जिसके समीप धन है वह पुरुष ही कुलवन्त है उसका कटना भी लोग आदरते हैं वह ही दर्शन के योग्य होता है वह ही सुनने योग्य है, वही गुण का जानने वाला है, इसलिए सर्वगुण कंचन के शायम में रहे हुए हैं ।

इन सब आसवालों को मैं मेरे गन्धकुंअलों के लिए
छाछूं तो वह मुझे धन देंगे । आशा करने वाला जगत
का दास बन जाता है । दोहा—

जब लग योगी योग में, तब लग रहत निराश ।
जब आशा तृष्णा जगी, जग गुरु जोगी दास ॥

आशा को ३ करण ३ योग से त्यागने वाले निर्ग्रन्थ
ही मुक्ति पाते हैं, नहीं तो जब धोबी महात्मा एक सदृश
ही है । जैसे भूतनाथ वैसे ही प्रेतनाथ ।

दोहा—जाकी शोभा जगत में, वा को जीवोधन ।
जीते ही वह मर गये, सुने कुशोभा कन ।

यत लोभ मूलानि पापानि रस मूलानि व्याधयः
स्नेह मूलानि दुःखानि त्रयस्त्यक्त्वा सुखी भवेत्

अर्थ—पाप का मूल लोभ, राग का मूल रसादि भ-
षण, दुःख का मूल स्नेह, इन तीनों को त्यागने वाला
सुखी होता है ।

दोहा—

तुलसी या जग आयकर, कोन भयो समरथ ।

इककंचन भरु कुचन पर, किण न पसारयो हत्थ ॥

जन्म मरण दुःख से डरे, मन आया वैराग ।

वन समरथ दोनूं तजा, लिया मुक्ति का माग ॥

२२ तीर्थकर के साधु परिग्रह में स्त्री को मानते हैं ।

ऋषभ महावीर के साधु परिग्रह को स्त्री को अलग २
 त्यागना कहते हैं, पुस्तक पात्र ज्ञानोपगमणादि वा शरीर
 संरक्षण मूर्च्छा जिसके है वह परिग्रह है इम परिग्रह से
 अब शेष ४ महाव्रत समूल नष्ट ज्ञानियां ने नहीं करमाया
 लेकिन चौथा अव्रत मेवत ही. अब शप चारों महाव्रत के
 जड़ में अग्नि लग जाती है एमा वीतगग ने फरमाया है।
 दोहा-चक्की फिरती देख के, दिया कबीर रोय ।

दो पाठों विच आय कं, भावित चचा न कोय ॥

चक्की फिरती देख क, हुचा कबीर उदास ।

कहक साहिक वच गये, कील साकही पास ॥

इसलिये अन्य दर्शन के पुराणों में ८८ हजार ऋषि
 बनोवासी सूरु फल, पुष्प, पत्र खाते एंम तपेश्वरी भी
 आखिर में स्त्रियों के दाम हुए ।

दोहा-रंकर पत्थर खात है ताको व्यापत काम ।

पट्टरस भोजन जो करे, ताकी जानत राम ॥

मनुष्य, मिह, मांप, हप्ती आदि भयंकर को वश
 में करता है, समुद्र में कूद मोती अंघर लाता है, आकाश
 में उड़ना आदि दुष्कर कार्य करता है शत्रुओं के संग्राम
 में शंख प्रहार सहता है लेकिन स्त्री के सन्मुख लाचार
 होता है ।

जगत जोड़े दाघ, कामनी हूँ अनभीकिसी ।

नरपां त्रिलोकीनाथ, राधा आगल राजिया ॥

वो स्त्री मन से दुराचार सेवने चाहती है, लेकिन तोकलज्जा से वा अक्काश मौका न मिलने से काया से कुशील नहीं सेव सकती है । ऐसे मन विदून पाले शील से स्वर्ग की बिना पति की अप्सरा देवी (वेश्या) उत्पन्न होती है । असंख्य वर्षों तक मनमाने जिम देव से रति विलास करती है, और जो ३ करण ३ योग से ब्रह्मचर्य पालते हैं उनकी अवश्य मुक्ति वीतराग ने फरमाई है । वाजे परिग्रह और स्त्री को व्यवहार में त्याग देते हैं लेकिन उन्हों से कपाय मात्सर्यता नहीं छूटती है ।

कंचन तजवी सहज है, सहज त्रिया कां नेह ।
पर निंदा पर ईर्ष्या, तुलमी दुर्लभ येह ॥

त्यागी नाम धरा करके भी परस्पर गच्छ कदाग्रह करने वाले जिनधर्म की वृद्धि कदापि नहीं कर सकते हैं, एक आक्षेप करता है तब दूसरे भी प्रत्युत्तर देते हैं । मिथ्यात्व का काटना तब ही जिनधर्म की वृद्धि होगी इस परस्पर के कुमंष से दिन प्रतिदिन जिनधर्म घटता चला जाता है । (ज्ञानसुन्दरजी) नामा भास ने एक जाट के जैसा हाल किया मालूम पड़ता है ।

एक राजा ने शंभु वेष किया, सब वेषधारी भोजन करने आने वालों को देख एक जाट ने विचार किया कि लहडू तो मेरे को भी खाना है लेकिन बिना वेष का स्वांग



निकाल दिया। जैन महाजनो ! ऐमा ही हाल ज्ञानसुन्दरजी ने किया है। मन चंगे माल, लंबी दंडवत, ऊम देवस्त्र ठाठ जमाने बिना गुरु वेष धारण किया इनके लेखों से मनोक्त वेष धरा मालूम दिया, गुजराती मिसला है—
 'सी जाय रूप के धूए, आदत जाय मुए' मेरा प्रत्युत्तर लेख कटुक तो है लेकिन पुराने द्वेष रूप ज्वर को काटने कटुक अमृत जैसा गुण करती है लोभरूप तरुण ज्वर में प्रत्युत हानिस्वात् करती है ज्ञानी का उपदेश उभयलोक सुखप्रद होता है लेकिन अज्ञान मिथ्यात्व के उदय से भारी कर्म जीव को नहीं रुचता है। यथा—

कहारे अज्ञानी जीव को, गुरु ज्ञान बतावे।

कयहू न विपधर विष तज, कहा दूध पिलावे ॥ क०

ऊपर इच्छा न नीपजे, कहा चोवन जावे।

राश भछा रन न्हाड़ ही, बहा गंग नहावे ॥ क० २

काली ऊन कुमाणमा, रंग दूजो न आवे।

श्रीजिनराज कोऊ कहा, याको सहज मिटावे ॥ क० ३

फलोद्दी के संघ ने संघ से निकाल दिया तो क्या दुष्सा गंगत कहाँ है, प्याँख के धंधे गाँठ के पूरे कोई न कोई तो आवेगा ही कर्मसहित को भाग्यसहित सो कोस के आँटे में भी आ मिलते हैं।

स्वाति नक्षत्र में गिरी हुई चंद्र साँप में मोती, कैले में कपूर. चाप्रक की प्यास शुभ, साँप के दूख में गिर

से विष होता है । ऐसी शिक्षा का स्वरूप ममभक्ता । मुझे
 अब आप दिल चाह मो लिख देना गुरु निंदा आपने
 लिखी तब उत्तर लिखा है । लिखने में भूल रहीं हो तो
 मिच्छामिदुकुडं करता हूं । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

जब लग पूरव पुण्य का, पहुंचे नहीं करार ।

तब लग तुम को माफ है, ओगुण करो हजार ॥

पुण्य क्षीण जब होयगा, उदय होयगा पाप ।

जैसे वन में लाकड़ी, सिलगत आपो आप ॥

यत वृष्टिकर्षकमिच्छति शांति मिच्छति साधवः ।

मक्षिकाव्रणमिच्छति द्रोहमिच्छति दुर्जनः ॥१॥

आप ज्ञानसुन्दरजी चस्मे दो हो तो लगाकर पढ़िये ।

यत उदरनिमित्तं बहुकृतवेषा, शिरस्तु मुंडित

लुचित केशा, वृद्धोयातः गृहीतंदंडं, तदपि न

मुंचति आश्यापिडं ॥

त्यागव्रत पूरा नहीं, साधु हुआ तो क्या हुआ ।

॥ शुभम् ॥

सर्व श्रीसंघ का कृपाभिलाषी—

बृहत्स्वरतर भट्टारकगच्छीय महोपाध्याय,

श्रीरामलाल गणिः

सिद्धपुत्र जैनधर्मोपदेशक.

* श्री पंच परमेष्ठिनो नमः *

श्री ज्ञानदर्शनचारित्र्यदाता धर्मशील (साधु) जी सद्गुरुभ्योनमः ।

॥ श्री वाग्देवतायै नमः ॥

असत्याक्षेप निराकरण ।

समस्त जैनधर्म चतुर्विध श्रीसंग्रह को मालूम हो कि मैंने “महाजन वश मुक्तावली” नाम की पुस्तक लिखी थी उसमें जो २ लेख मिले व प्रमाणिक आचार्य उपाध्यायादि के मुख से श्रवण किये थे । उन सर्वों का संग्रह कर छपवाया । जिसकी प्रथमावृत्ति एक सहस्र प्रति विक्रम संवत् १९६८ में प्रसिद्ध हुई थी वह विक्रम लोने पर द्वितीयावृत्ति दो सहस्र सं० १९७८ में छपवाई । अथ इनके वर्ष व्यतीत होने पीछे कुशलागच्छी, गयचरचन्द्रजी ने सं० १९८३ में उसमें सत्य लिखे हुये खरतन्गच्छ्राधिपति जिनवह्मसूरिः जिनवह्मसूरिः आदि का महात्म्य पभाव का पढ कर, द्वेषवृत्ति और विशेषतया लोभ पिशान से विषय हो उसको समालोचना (विमूर्चना) “ जैन जाति निर्णय ” नाम की पुस्तक के दो शब्द छपाकर प्रसिद्ध किये हैं । उनका प्रत्युत्तर मैंने लिखा है । काम नहीं । किन्तु उन्हीं के असत्य आरोपों को, जैसे याद आये वैसे ही यथ धनया निराकरण किये हैं ।

मैं यद्यपि दृष्टान्त हूँ और अब मेरी ७० वर्ष की आयु है, वहाँ बूढ़ि रही हो तो विदुष्य जन सुभागेने, और इसको उपोषान्त पढे कि विचार करे कि गयचरचन्द्रजी का लिखना कहां तक सत्य है ? द्वेष होने का कारण तो अनुमान व प्रमाण से या मालूम होगा है विक्रम संवत् १०२० में पाटण में शंकरदासी जिनसदिर में

उसमें चढ़े हुये द्रव्य को अपने भोग, उपभोग में लेना, इस लालच से उस द्रव्य के जरिये से नये २ जिनचैत्य कराना इत्यादि। इस अकृत्य को दूर करने वर्द्धमानसूरिः और उनके शिष्य जिनेश्वरसूरि यह दोनों गुजरात देश के अणहिल पाटण में जा, राज सभा में उच्चैत्यवासियों का जहाँ ज्यादा बल और समुदाय था। वहाँ उन्होंने राजा की आज्ञानुसार शास्त्रार्थ अनेक विद्वानों की मध्यस्थता में किया। वहाँ साधु का आचार आचारांग और दश वैकालिकादि सूत्रानुसार, और साधु का वेप धार कर जो जिनमंदिर आप द्रव्य द्वारा बनाये या थायक के अभाव से, धावरू के भाय से बनाये हुए जिनचैत्य का साधु वेपधारी कभी आप अपने द्रव्य से जीर्णोद्धार भी करावे तो, अस्मंत्य भव संसार में जन्म मरण यह द्रव्य साधु वेपधारी करे, उन द्रव्य वेपधारी को पूर्वोक्त कार्य करने की आज्ञा देने वाला शुद्ध चारित्रधर की भी यही गति हो, ऐसा महानिर्लाय ब्रह्म अथ कमल प्रभाचार्य का लेख दिनाया। जिनचैत्य व जिर्णोद्धार कराना गृहस्थ थायक का कृत्य है। वह भी न्यायोपाहित द्रव्य और मुक्ति के अर्थ भाय से करावे और अष्टद्रव्यादिक से पूजा। इसी सूत्र लेख में व ज्ञानागुत्र के छुटे अरू से रायप्रशंणी उपांग में थायक का करना। समकित पुष्टी के लिये, साधु का जिनप्रतिमा के सम्मुख देवल भाव स्व ही करना सिद्ध किया।

तब प्रजा ने ३ पंडितों ने कहा तमे पुरा षो। राजा दुर्लभ और दुर्लभ विद्वानों ने उत्तर विरह दिया और शिष्यावासियों का कहा तमे कुंभना षो। उस समय भट्ट खंगों ने ऐसा कहा:—

हा-हारना तं कुंभना भया, जीना मरतर जाणिया।
निगे काल श्री संव में, गच्छ दोय अम्बाणिया ॥

चैत्यवासियों पर यह जिनेश्वराचार्य का प्रथम उपकार था। कई एक आत्मारथियों ने इस कृत्य को त्याग दिया। कईयों ने नहीं त्यागा। द्वेष का कारण तो यह हो सका है।

गयवरचंदजी के द्वेष का दूसरा कारण धन का लालच है। जैसे कुञ्जडी दूसरे के बेर सब खड़े, मेरे मीठे नहीं कहे तो उसके बेरों की धिक्की कैसे हो ? "महाजन वंश मुक्तावली" की धिक्की देख धन जमा करने का विचार किन्ना कि मैं सब आंसवालों को कुञ्जलागच्छ प्रतिशोधक लिख दूँ, तब यह सब मेरी पुस्तक खरीदेंगे। तब मेरा द्रव्य का खजाना भरेगा इसलिये लिखा है मेरी जन जाति महोदय नाम की रची पुस्तक पढो।

तीसरा अपने घमण्ड का कारण भी मालूम होता है। मन में समझ रहे हैं कि जैनवर्ग में आज मेरा मुकाबला करने वाला कोई नहीं है। मेजरनामा द्रपयाथा और स्वधेगियों की निंदा लिखने में कमी नहीं रखी। किन्ती ने भी दाँव जड़े नहीं करे। टीटोड़ी पत्नी अपने दोनों पाँव ऊंचे कर खोती है, अग्निप्राथ उसका ऐसा है कि आसमान गिरे तो मेरे पाँवों के पल गिरने नहीं पायेगा। इसको थांभरे वाली मैं ही हूँ। अर्थात् एक समय साधु मैं ही हूँ। जैनवर्ग सात मेरे आकार पर है, चलती घंल गाड़ी के मध्य में लुत्ता घुस कर बसता है और मन में समझता है कि यह गाड़ी मेरे ही पल से चल रही है। यह सब घमण्डियों के लच्छान बुद्धिमान जानते हैं। धन और स्त्री के लिये गारजा में लिखा देना है,—

पत सर्वेषामेपरतानां स्त्रीरत्नं तु उत्तमं ।

तदर्थं धनमिच्छन्ति तत्प्रागेनानेन किं ॥

अर्थात् सखारी मनुष्य कर्षण रत्नों में स्त्री रत्न ही उत्तम समझते हैं, उसके लिये धन की प्राप्ति से अनेक उपन करते हैं। उसका

त्याग जिसने किया उसको धन इकट्ठा करने की ज्यादा जरूरत नहीं।

प्रश्न—यदि कहोगे यति लोग धन क्यों रखते हैं ?

उत्तर—यति लोग वर्तमान काल वाले पंच महाव्रत नहीं उच्चरते हैं, उन्हीं को धर्मोपदेशक जैन पंडितपट्ट की दांजा देते वक्त श्रुत-सामायक (सम्यक्च सामायक) गुरु उच्चरते हैं। सामायक तीन प्रकार को सिद्धान्तों में लिखा है। उपाध्याय क्षमा कल्याणजी ने ज्ञानपत्रमा के स्तवन में लिखा है।

जहां साधु श्रावक मारग लहिये, संवेग पत्नी बलिसर दहिये ।
ये त्रिणविन भव मारग कहिये, श्रुत अतहिभला सध सकल आ-
धारनमू त्रिभुवनतिलो ॥२॥

अर्थात् जिनेश्वरदंड का कहा हुआ ऐसा श्रुतज्ञान है जिसमें साधु का मार्ग १ श्रावक का मार्ग २ और तीसरा संवेगपत्नी का मार्ग कहा है इन तीन बिना अन्य सब भव भ्रमण का मार्ग है। अब बुद्धिमान समझ सकते हैं। संवेगपत्नी और साधु यह दो भिन्न २ कौन है।

खरतरगच्छ में संवेगी साधु इनके गुरु वाचक अमृत धर्म और इनके शिष्य उपाध्याय क्षमा कल्याण गणि हुये, जिन्होंने संस्कृतबद्ध जैनग्रंथ सौ रचे स्तवनादि अनेक सवत १२०० के मध्यकाल में खरतर भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरि के समय में देवचन्द्रजी न्याय चक्र-
सवत् १२१० में देवलोक हुये और उक्त दोनों मुनि, महन्त तीसरे
अध्यात्मिक कवीश्वर सविज्ञ साधु ज्ञानसार (नरायण) बाबा
समय हुये निकलना इसलिये सम्भव होता है। उस समय
मन्दाचारी होना गुरु हुए थे, लेकिन क्षमाकल्याणजी ने
संस्कृत ग्रंथों में जिन दर्पसूरि गणधर के राज्य में यह

रखा ऐसा प्रायः लिखा है। उस पीछे यति श्रुतसामायक दीक्षा शिष्य को देने लगे। श्रुतसामायक सम्यक्त्व को कहते हैं, यह है तो सब धर्म की जड़ है। तथा आत्मारामजी जैन तत्वादर्श ग्रन्थ में लिखा है कि साधु के रूप वाला जब तक मन में मोह क्षय करने की चांछा रखता है उसको साधु समझना ऐसे यति लोग धर्म ठग नहीं और जो ऊपर से साधु का बाना हो और धाधकों से पुस्तकादि के धोके से धन इकट्ठा करते हैं और लडकों के सग न करने योग्य रमत खेल करने वाले जमना से पार उतर पूत्र के सब तीर्थ की यात्रा करी ऐसा समझने वाले, ऐसे धूर्त को शतशः धिक्कार है। महाव्रत उच्चार कर मूल गुण भंग करे उसको ओसना पासत्या आदि तीर्थ करने फरमाया है यह विशेषण उन महाव्रतभगी के लिये है वर्त्तमान यती गुरु के लिये नहीं कहा है।

बाजे गृहस्थ भी ऊपर की क्रिया मात्र देख ऐसे धूर्तों के ट्टिरागी होते हैं। चियेकी तो जैसे का जैसा समझ लेते हैं। एक ट्टिरागी गृहस्थ की खां से साधु उस गृहस्थ का माननीय अम्रत सेव रहा था इतने में वह ट्टिरागी गृहस्थ घर पर आया और साधु के भौली पात्र ओघा पड़ा देखा और कोठे का दरवाजा बन्द देखा तब लुप के खड़ा रहा पीछे वह साधु नामधारी बाहिर आकर गुचि करने गरम जल उस खां से मांगा। खां ने कहा टाढो आपू, उसने कहा ना उष्ण आवा, खां ने गरम जल दिया। यह हाल देख वह ट्टिरागी मन में अत्यन्त गुस एो कह उठा धन्य है साधुजी ने ते क्रिया मां नहीं चूक्या चौधू अम्रत सेव्यूं आ मां साधुजी तो दोष नहीं आ तो कर्म धरनी दोधा जानो साधुजी सुं करे अपनी खां से कहने लगा। साधुजी ने त्यां वू भले जा, साधुजीनी लोको मां पैठ प्रतीति हे, आटे घरनी आयरु नहीं जाय गोरजी ने त्यां जाजे कामां फिरिहा प्रतीति नहीं। इस ट्टान्त बां ध्यान नें लो।

2

3

पहले विक्रम संवत् २०५ में स्वामी शङ्कर जन्मे और उन्होंने राजाओं से मदद पाई। जैनियों से शास्त्रार्थ तो नहीं किया लेकिन राजाओं से सुभट्टों को हुकम दिलवाया जैसा कि शङ्करदिग्विजय में लिखा है।

“आसेतु तुपाराद्रि धौद्धानां वृद्धं घालकं निहंतिभृत्यं इत्यवश्यं नृपा”

अर्थात् सेतुबंध (रामेश्वर) से लेकर हिमालय पहाड़ तक। धौद्ध धर्मियों के वृद्ध और घालक को सुभट्ट जो राज भृत्य है, घह करल करे। ऐसी राजाओं ने अवश्य आशा दी। ऐसा घोर जुल्म जारी हुवा। अन्य धर्मी धौद्ध और जैन धर्म को एक ही समझते थे। इनके लेखानुसार कितने ही समय तक पश्चिमी विद्वान भी ऐसा ही समझते रहे लेकिन अब जैन और धौद्धों के ग्रंथ पढने से निश्चय होगया कि यह दोनों सदा से जुदे जुदे हैं। एक नहीं धौद्ध आत्मा को क्षण भङ्ग मानता है। जैन आत्मा को अविनाशी मानता है। धौद्ध मरे जीव के मांस खाने में दोष नहीं करते। जैन मांस के खाने में नरक गति बतलाते हैं। धौद्ध के मत में रात को खाने में दोष नहीं मानते हैं। जैनधर्मी महापाप मानते हैं। बौद्ध नास्तिक है। जैन आस्तिक है। जैन जीव के किये हुये पाप, पुण्य के स्वर्कर्मनुसार नरक स्वर्गादि गति में फल भोगना मानते हैं। कर्म वा तदन धौद्ध नाश होने से जीव की मुक्ति, सच्चिदानन्द होना मानते हैं। फिर घह मुक्त जीव का संसार में जन्म लेना नहीं मानते हैं। इसलिये बौद्धों का मानना इनसे उलटा है यह प्रशंगपश लिखा है।

‘जुल्म की जड कोता’, इस कथापत मुजय - “सेर को सदासेर” या पडुंचा। ईस्वी सन् १००० में मोहम्मद गजनवी की चढ़ाई हिन्द में पहली हुई। ईस्वी सन् एक हजार चौदास तक गुजरात पर तेरहवीं चढ़ाई आकर ही हुई। इसमें करोड़ों हिन्द और “तनाख के

स्त्रियों ऐसे धर्म धूर्तों का सहवास ज्यादा करता है और वह अपना जन्म और उन स्त्रियों का जन्म बिगाड़ते हैं। दृष्टिरागी इस पर ध्यान नहीं देते हैं। आखिर तो गन्ध फैल ही जाती है।

दोहा - वैद्यन को रिपु दोष है, वेद्या को रिपु भांड ।
ब्राह्मण को रिपु साध है, साधन की रिपु रांड ॥

अब देखो धर्म धूर्तपने का गयधरचन्द्रजी का लेख आठ इतिहास वेत्ताओं का प्रमाण "जैन जाति निर्णय" में दिया है, पहला प्रमाण राय बहादुर पं० गौरीशङ्करजी ओझा का है। उक्त महोदय सं० १९२३ के आश्विन सुदी ६ को वोकांनेर बड़े उपाश्रय में भट्टारक श्री जिन चारित्रसूरिध्वरजी के दर्शनार्थ आये थे। वहां पर मुझे भी बुलाया, जब श्रीजी से बोधरा कल्याणत कर्मचन्द की वंशावली देखने को मांगी, जो आप पहले देख चुके थे। उसका पडताल को, जब श्रीजी ने दफ्तर दिखाया तब यथार्थ विदित हुआ। फिर मुझ से कहा कि आप रचित "महाबन मुक्तावली" को मैंने आघोषान्त पढ़ी और प्रशंसा के योग्य है, लेकिन उपलदेव पंवार का होना, एक हजार वर्ष शिला लेखों से सप्रमाण सिद्ध है। आपने चौबीस सौ कुछ ऊपर वर्ष लिखा है। तब मैंने कहा, यह असत्यता मेरी नहीं, किन्तु कुंअलगच्छ के गृहस्थी महात्मा लखजी ने जो मुझे पत्र दिये उससे लिखा गया है।

संवत् १५०० में कुंअलगच्छ के आचार्य गृहस्थ महात्मा (मधेश) व खजवाणा मारवाड़ के गांव में हो गये, तब कितने ही गुजरने पर संवत् सोलैसौ के अखीर में फिर कुंअलगच्छ में बनाया गया; इस लेख की असत्यता के दोषी कुंवलो की है। और भी असत्यता के बहुत प्रमाण है।

पहले विक्रम संवत् २०५ में स्वामी शङ्कर जन्मे और उन्होंने राजाओं से मदद पाई। जैनियों से शास्त्रार्थ तो नहीं किया लेकिन राजाओं से सुभट्टों को हुकम दिलवाया जैसा कि शङ्करदिग्विजय में लिखा है।

“आसेतु तुपाराद्रि घौसानां वृद्धं बालकं निहंतिभृत्यं इत्यवश्यं नृपा”

अर्थात् सेतुबन्ध (रामेश्वर) से लेकर हिमालय पहाड़ तक। घौड़ धर्मियों के वृद्ध और बालक को सुभट्ट जो राज भृत्य है, घट फत्ल करें। ऐसी राजाओं ने अवश्य आज्ञा दी। ऐसा घोर जुल्म जारी हुआ। अन्य धर्मी बौद्ध और जैन धर्म को एक ही समझते थे। इनके लेखानुसार कितने ही समय तक पश्चिमी विद्वान भी ऐसा ही समझते रहे लेकिन अब जैन और बौद्धों के ग्रंथ पढ़ने से निश्चय हो गया कि यह दोनों सदा से जुदे छुदे हैं। एक नहीं बौद्ध आत्मा को क्षण भङ्ग मानता है। जैन आत्मा को अविनाशी मानता है। बौद्ध मरे जीव के मांस खाने में दोष नहीं कहते। जैन मांस के खाने में नरक गति बतलाते हैं। बौद्ध के मत में रात को खाने में दोष नहीं मानते हैं। जैनधर्मी महापाप मानते हैं। बौद्ध नास्तिक है। जैन आस्तिक है। जैन जीव के किये हुये पाप, पुण्य के स्वकर्मानुसार नरक स्वर्गादि गति में फल भोगना मानते हैं। कर्म का तदन दोज नाश होने से जीव की मुक्ति, सच्चिदानन्द होना मानते हैं। फिर वह मुक्त जीव का संसार में जन्म लेना नहीं मानते हैं। इसलिये बौद्धों का मानना इनसे उलटा है यह प्रमांगवश लिखा है।

‘जुल्म की जड कोता’, इस बहादुरत मुजय - “सेर को सघालेर” सा पढ़ुंवा। ईसो सन् १००० में मोहम्मद गजनवी की चढ़ाई हिन्द में पहली हुई। ईसी सन् एक हजार चौदास तक गुजरात तेरहवीं चढ़ाई आकरी हुई। इसमें बरोड़ों हिन्दू और “त

गजनवी के जुलम में, आप सेना लेकर खड़े रहे होंगे। असत्य की भी सीमा ड़ुवा करती है, आपने तो गप्प का कोप भर डाला।

सोरठा-गप्पी गप्प प्रकाश अणदीठी भाखं इसी।

उडती फिर आकाश रंज न लागे राजिया ॥

सत्य वार्ता तो यह है कि खरतरादिगच्छ के वा और गच्छ के महान् आचार्यों ने ओसवाल जाति बनाई है। ऊपर लिखे जुलम गुजरने के पीछे विक्रम के ६०० सौ वर्ष व्यतीत होने पीछे शिला लेख मूर्ति लेख में ओसवाल जाति का नाम लिखा पाया जाता है। इस समय उपकेश (कुञ्जला) गच्छ में कोई रत्नप्रभसूरि आचार्य नहीं ड़ुवा है।

तुमने चोरडिये कुञ्जलों के लिखे यह भी असत्य है। वीकानेर संवत् १५४५ में घसा उस घक्त खरतरगच्छ का उपासरा, उस पीछे कुँवलोगच्छ के गृहस्थी महात्माओं की पोशाल भी वनी, तब भी जँघरी, बजते, चोरडिये लोकों में पञ्जाब वीकानेर के गाँवों में, सब लोकों में है, रामपुरिये चोरडिये, पार्श्वचन्द्र में, १६०० सौ के पीछे आचार्य भी कुञ्जलों के यहाँ रहे। चोरडियों ने नहीं माना। कुञ्जलों के होते तो मानते। चोरवेडिये चोडिये गोत्र जुदा है।

देवो पूरणचन्द्रजो नाहर का छापा मूर्ति लेख, किसी एक क्षेत्र में मान लिया। लेकिन कुञ्जलों के नहीं हो सकते। जैन धर्म में १२ दिगम्बराचार्यों के रत्ने लाखों ग्रन्थ हैं, किसी ने भी १२

रत्नप्रभसूरि:

ने शायद

चोडा

रवाल

निशान तक नहीं लिखा है।

हो नहीं तो शाखाएँ कहां ने

डाला है। लाखों राजपूतादि

बादा भी जिनदत्तसूरि का

गजनवी के जुल्म में, आप सेना लेकर खड़े रहे होंगे। असत्य की भी सीमा हुवा करती है, आपने तो गण्य का कोप भर डाला।

सोरठा—गण्यी गण्य प्रकाश अणदीठी भाखइसी।

उडती फिरं आकाश रंज न लागे राजिया ॥

सत्य घातों तो यह है कि खरतरादिगच्छ के वा और गच्छ के महान् आचार्यों ने ओसवाल जाति बनाई है। ऊपर लिखे जुल्म गुजरने के पीछे विक्रम के ६०० सौ वर्ष व्यतीत होने पीछे शिला लेख मूर्ति लेख में ओसवाल जाति का नाम लिखा पाया जाता है। इस समय उपकेश (कुञ्जला) गच्छ में कोई रत्नप्रभसूरि आचार्य नहीं हुवा है।

तुमने चोरडिये कुञ्जलों के लिखे यह भी असत्य है। धीकानेर संवत् १५४५ में घसा उस घक्त खरतरगच्छ का उपासरा, उस पीछे कुँवल्लेगच्छ के गृहस्थी महात्माओं की पोशाल भी घनी, तब भी जंघरी, बजते, चोरडिये लोकों में पञ्जाब धीकानेर के गांवों में, सब लोकों में हैं, रामपुरिये चोरडिये, पार्श्वचन्द्र में, १६०० सौ के पीछे आचार्य भी कुञ्जलों के यहाँ रहे। चोरडियों ने नहीं माना। कुञ्जलों के होते तो मानते। चोरघेडिये चोडिये गोत्र जुदा है।

देणो पूरणचन्द्रजी नाएर का लापा मूर्ति लेख, किसी एक क्षेत्र में मान लिया। लेकिन कुञ्जलों के नहीं हो सकते। जैन धर्म में ज्येताम्वर दिगम्बराचार्यों के रत्ने लापों ग्रन्थ हैं, किसी ने भी १= गोत्र स्थापक रत्नप्रभसूरि: का नाम निशान तक नहीं लिखा है। "नास्ति मूल कुतो शाखा" जब जड़ ही नहीं तो शाखाएँ कहाँ से हो ? वे प्रमाण लम्बा चौड़ा लेख लिख डाला है। लापों राजपूतानादि उत्तम वर्ग को ओसवाल करने वाले बादो भी जिनदस्त

के पास वनवाने की आज्ञा दी वह विद्यमान है। बादशाह अकबर ने तपाहीर विजयसूरि विजयशेनसूरि को अपने पास बुलाया, धर्म सुना। अहिंसा के फर्मान आदि लिख दिये। ऐसे ही खरतर श्री जिनचंद्रसूरि जिनसिंहसूरि को बुला कर धर्म सुना खंभायत आदि तीर्थ स्थानों की जीव हिंसा असाढ सुदी नवमी से पूनम तक कोई जीव जतु मेरे राज्य में न मारा जावे। तपस्वी जिनचंद्रसूरि इस फरमान में यह लेख ज्यादा है। परमेश्वर ने अनेक भांति के पदार्थ मनुष्य के लिये उपजाये हैं। तब वह किसी जानवर को दुःख न दे और अपने पेट को पशुओं का मरघट न बनावे। इस लेख से मालूम हो रहा है। श्री जिनचंद्रसूरि उक्त जिनसिंहसूरि के उपदेश से अकबर ने मांस खाना त्याग दिया सिद्ध है। ज्यादा कर्तव्य पूरणचन्द्रजी नाहर तथा जिनविजयजी का मूर्तियों पर के लेखों में दोनों आचार्य के गुणानुवाद देखो। दो हजार वर्ष की निर्वाण के पूर्ण होने से जिन धर्म का उदय इन्होंने किया यदि १० गोत्रों के प्रति बोधको के सन्तानोय बादशाह अकबर कुँअलोगच्छ को सुनता तो अवश्य कुँअलोगच्छ के आचार्य को ही बुलवाता। हे नहीं तो बुलावे कैसे उपदेश कुँअलोगच्छ के आचार्यों ने जिन २ मूर्तियों की प्रतिष्ठा की है उसमें अपने को सर्वत्र कजुदाचार्य सन्तानीय लिखा है। यदि १० गोत्र प्रतिबोधक कुँअल नामवरी वाले आचार्य रत्नप्रभसूरि होते तो उनके संतानी आपको लिखते इत्यादि प्रमाणों द्वारा सिद्ध है रत्नप्रभसूरि ने १० गोत्रों को प्रतिबोध दे ओसवाल नहीं बनाये आप फिजूल गल्ल पर्यो यजाते हैं।

एक व्यक्ति ने अपना नाम न देकर उनसे के नाम से भोजक प्रालियों को भाट किया है। ऐसा पूजने पर २०५०००० गोत्रों ने कहा भोजकों के पदे प्रमाणों से यह साफलीया प्रालय है। देश के इतनेगने साफलीय ससूत होता है। जो इस समय १०

श्रोसवालों का इतिहास की मांगनी कर सकता है। लखजी महात्मा भी आगे ही अपना इतिहास लिखने को हमको दिया। वह मैंने सरल भाव से लिख दिया। हम तो सिर्फ खरतरगचार्य प्रतिबोधकों मात्र का लिखते थे। फिर जो मिला वह सब लिखा। तुमने लिखा रोटी पछेवड़ी के लिये। खरतरगच्छ में श्रोसवालों को लिखा है यों तो श्रोसवालों के घर कोई भी वेपथारी किसी भी गच्छ का चला जाये तो रोटी व चहर न हो तो देते हैं। मालूम नहीं आपको रोटी पछेवड़ी के मालिक अपने २ गच्छ के श्री पूज्यजी होते हैं वह चाहे किसी को दे या न दे। जतियों का उजर नहीं। अपने इल्म द्वारा हासिल करे वह उस जती का होता है जो आदेशी श्री पूज्यजी का भेजा जाता है वह ध्यात्यानादि श्रावकर सुनाता प्रतिक्रमण पोसा देशावगासी तपविधि, पद्यस्मरण, कराना, धर्म ग्रथ पढाना, पूजा प्रतिष्ठादि धर्म, कृत्य कराता है। तब अपने धर्मोपदेशक उपगारी गुरु मात्र समझ के श्रांमर व्याह आदि अनेक कार्य में वस्त्रादि ज्ञानोपगरण व नगदी भेट करते हैं। उस धन से जती तीर्थयात्रा श्री पूज्यजी की भेट, रोगादि कारण पर गुरु आदिक की देयावष्ट, वैद्यकों देने श्रीपधी खर्च घर गुरु का देहात खर्च जीव राशि खमाणा टीप शीरणी दादागुरु देव पूजा, शिष्य लेना, परिदत रख मासिक दे पढाना दीक्षा व्यय पुस्तक निरवाना, ज्ञान भंडार इत्यादि अनेक शुभ कार्य में यति सविभाग तप कर पूठा पित्रांगनादि देना यह श्रावकों का दिया हुआ द्रव्य लगा देते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रवृत्ति है धायक सब देवते हैं और जानते हैं तभी तो द्रव्य उचित प्रमाण देते हैं त्यागी का छोड़ जमा कर रुपया दो रुपया तो नहीं लेते हैं लेकिन पुस्तक लिखाने रुपाने परिदत से गुप्त साजा रख इसको दिलाने धन रखने को श्रावकों को हजारों रुपयों के व्यर्थों में उतारते हैं। ऐसा भाग प्रपन्न धोका देना जती लोगों से नहीं बनता। उपादे कुपों में कोई नहीं गिरता लेकिन क्या ही का दम दिलाने वाले पास खेट के कुपों की तरह देखने वाला

श्रीसवालों का इतिहास की मांगनी कर सकता है। लखजी महात्मा
 भां आगे हो अपना इतिहास लिखने को हमको दिया। वह मैंने सरल
 भाव से लिख दिया। हम तो सिर्फ खरतराचार्य प्रतिबोधकों मात्र
 का लिखते थे। फिर जो मिला वह सब लिखा। तुमने लिखा रोटी
 पछेवडी के लिये। खरतरगच्छ में श्रीसवालों को लिखा है यों तो
 श्रीसवालों के घर कोई भी बेपयारी किसी भी गच्छ का चला जाये
 तो रोटी व चढ़र न हो तो देते हैं। मालूम नहीं आपको रोटी पछेवडी
 के मालिक अपने २ गच्छ के श्री पूज्यजी होते हैं वह चाहे किसी को
 दे या न दे। जतोरों का उजर नहीं। अपने इन्म द्वारा दामिल काने
 पह उस जती का हांता है जो आदेशी श्री पूज्यजी का भेजा जाता
 है वह ध्यायानादि शान्चकर सुनाता प्रतिक्रमण पोसा देशावगासी
 तपविधि, पद्यस्मरण, कराना, धर्म ग्रथ पढाना, पूजा प्रतिष्ठादि धर्म,
 कृष्य कराना है। तर अपने धर्मोपदेशक उपगारी गुरु मात्र समझ के
 आभार व्याह आदि अनेक कार्य में बन्नादि जानोपगण्य घनगदी भेंट
 करते हैं। उस धन से जती तीर्थयात्रा श्री पूज्यजी को भेंट रंगादि
 पारण पर गुरु आदिक की देशावच्छ, चैत्रकों देने श्रीपधी खर्च घग्ग
 गुरु का देहात खर्च जीव राशि खमाणा टोप भोरणी दादागुरु देव
 पूजा, शिष्य लेना, परिदत रख माभिक दे पढाना दीसा व्यव पुस्तक
 निगाना, दान भठार इत्यादि अनेक शुभ कार्य में शक्ति शक्तिभाग
 तप कर पूठा विटांगनादि देना यह आषकों का दिया हुता इन्म
 नगा देते हैं। यह प्रत्यक्ष प्रवृत्ति है आषक रख देगते हैं और
 हैं नभों तो इन्म वृत्ति प्रमाण देते हैं ग्यागी का होइ
 कपया हो कपया तो नहीं लेते हैं लेबिन पुग्गब लिखाने
 पण्डित से गुप्त साजा रख उसको दिखाने धन रखने को
 को एतारों कपये के कदों में नकारते हैं ऐसा भाषा प्रपञ्च धं
 जती संगों से नहीं बनता। ग्यागे कृप में कोई नहीं लिखता
 रया तो का दम दिखाने दाने कपय सेट से कर्प को करत

के लड़ू फीके क्यों ?” जैसे कि मानलो ओसिया नगर चार लाख घरों वी आवादी का था, उसमें सब राजपूत ही रहते थे। वाह क्या कहना है यह वार्ता प्रत्यक्ष प्रमाण के भी बरखिलाफ है ? किसी भी शहर में एक जाति के इतने घर होते न देखा न सुना ? ब्राह्मण, रोडे, खत्रो, बनिये, नाई, धोबी, सुतार, कुम्भार, लुहार, तेली, तम्योली मांस भक्षियों के लिये कसाई, डेढ, थोरी, भगी, रैगर, चमार, माली आदि जिस शहर में देखते हैं सब में हैं। आपने लिखा कि तीन लाख चौरासी हजार घरों को रत्नप्रभसूरिः ने ओसवाल बनाये सिर्फ १६ हजार घर अब शेष बचे। इस लेख से तो आपने ओसवाल जाति को महाकलङ्क लगाया है।

सच है जिनके चचाजी ऐसे तो उनके फर्जनजी वैसे क्यों न हों? आपके गच्छ की पट्टावली लिखने वालों ने कर्मा नहीं रफकी तो आप उनसे भी आगे पांव धरें, इसमें ताज्जुब ही क्या है ? “भाभेजी ने रातीधो, म्हाने भजलो ई राम। या दृशी शीतलादेवी तादसः खर थाहन.” यह मिसला आपके लेख का है। लेकिन इस असत्य लेख को पढकर या तो कोई कहेगा ओसवाल जाति तो “साँभर पड़ा सब लूण” सारी यस्ती के घासिन्दे स्रेच्छ तफ ओसवाल बने हैं। सत्य असत्य की परीक्षा करने वाले तो कहेंगे कि ओसवाल जाति अश्वपति उद्य जाति है उत्तम घर्ण से घनी होगी, नहीं तो साडी धारह न्यात के घनियों में कघो पघो में शामिल कैसे भोजन करते राजाओं के मन्त्री और सब कार्य के मुखिया इनको राजा लोग कैसे घनाते ? आपने तो अपने गच्छ का मदात्म्य सिद्ध करने को, लोभ के मारे अपने घनाने को ऐसा लेख लिखकर ओसवालों को लजित किया है। युद्धिमान ओसवाल आपकी कसोटो इसही लेख से लगा लेंगे। ओसवालों को प्रनियोध देने वाले ओसियां में और ि गच्छ के शाचार्य हैं। कुँसलागच्छ वाले नहीं। यह भी हजार के लगभग क्योंकि मूर्तिलेख शिलालेख के प्रमाणों से।

साधु अन्धे को अन्धा न कहे और चोर को चोर्, व्यभिचारी को व्यभिचारी न कहे । कहे तो मृषावादी साधु हो, ऐसा भगवान ने फरमाया है । लेकिन यह कथन जैन सूत्रों में साधुओं के लिये ही है गयवरचन्द्रजी के लिये नहीं भूँठ और निंदा का त्याग होता तो दो किनाश नहीं लिखते । जैसे कुलटा अपनी पैठ जमाने को अन्य सब स्त्रियों को कुलटा बतलाती है । तुम ने कोरंटवालनक्षुरि के प्रतिबोधक बोधरी को लिखा है और नहीं २ ऐसे सर्व प्रमाणों में नशब्द का व्यवहार किया है । जैसे एक घमडी ने कहा कि मैंने सब परिडतों को जीत लिया । किसी ने पूछा किस तरह ? घमडी ने कहा कि जहाँ परिडतों से मुकाबिला हुआ वहाँ मैंने प्रभ्र पूछा । उसका जवाब उन्होंने प्रमाणयुक्त कई दिये परन्तु मैंने ना के सिधाय हां कहा ही नहीं तब सब परिडत चुप होगये यह हाल आपका है ।

ईस्वी सन् १२०० के करीब आबू और कायद्रा गांव के मध्य में सामन्तसिंह और गुजरात के राजा के सेनापति प्रह्लादन से लड़ाई हुई । जिन विजयजी प्राचीन लेख संग्रह में लिखते हैं पृष्ठ १०८ से १०९ तक । यह राजा कौन जाति का सामन्तसिंह था उसका निश्चय होना मुश्किल है, क्योंकि उस वखत सामन्तसिंह नाम के कई राजा विद्यमान थे ऐसा लिखा है । समझ लो तो विचारलो सामन्तसिंह बोधरी का चाहुमान राजा बड़का था जो कि कर्मचन्द घच्छायत बोधरी के चरित्र में लिखा है । आपने जो फिर २ के कई बाप किये वैसा कलङ्क बोधरी के लिये भी समझा होगा । सामन्तसिंह चाहुमान राजा जालोर (जाधालीपुर) का मालिक था । (देखो जिन विजयजी का जालोर का इतिहास) पमारों से चाहुमानों ने युद्ध कर सं० ११७५ पीछे लिया था । कतिपय कालान्तर से कर्त्तिपाल चाहुमान नाडोल से राज्य छोड़ आलोर में रहने लगा । आबू के पमार राजा भीम की लड़कों से सामन्तसिंह ने

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतियोधित वाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतियोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे है ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। संग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। "मलहार हेमसूराण, सीसलेसेण सूरिणारइयं इत्यादि" लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुंगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तोंनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुओं का बदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वंदनादि सब सन्मान गुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा धूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरों तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मां को समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सास ने सोचा जेवाई मरा तो मेरी घेटी रांड होजायगी। तब उसने अपनी मां को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घट सब विधि बना जेवाई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गहर के अपने पति से कहने लगी कि "देख बन्दी का चाला, सिर मूंडा मुँह काला" तब पति ने कहा "देख बन्दी की फेरी अम्मा तेरीक मेरा" साखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतियोधित वाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतियोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे हैं ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। सग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। "मलहार हेमसूराण, सीसलेसेण सूरिणारुद्रय त्यादि" लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तानों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुश्री का बदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर बदनादि सब सन्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं हांता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा क्रूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा का समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सासू ने सोचा जँघाई मरा तो मेरी बेटा रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घट सब विधि बना जँघाई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गहर के अपने पति से कहने लगी कि "देख बन्दी का चाला, सिर मूँडा मुँह काला" तब पति ने कहा "देख बन्दी को फेरी अम्मा तेरोक मेरो" साखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतिबोधित वाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतिबोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे हैं ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, वडे तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। संग्रहणी प्रकरण की अन्त की गाथा देखो। "मलधार हेमसूरीण, सीसलेसेण सूरिणा रड्य इत्यादि" लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तानों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपधर साधुओं का वदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी वत्ससूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर वदनादि सब सन्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनवर्ग में विख्यात होने का प्रथि बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा क्रूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा का समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सासू ने सोचा जेवई मरा तो मेरी बेटा रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सासू घट सब विधि बना जेवई के घर आई। तब वह स्त्री मारे गदर के अपने पति से कहने लगी कि "देख बन्दी का चाला, सिर मूड़ा मुँह काला" तब पति ने कहा "देख बन्दी की फेरी, अम्मा तेरोक मेरा" आखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

जपूत दादा गुरु श्री जिनकुलसूरिः प्रतिबोधित चाकी कई गोत्र अन्य खरतराचार्य प्रतिबोधक है किसी कारणवश और कोई २ घर औरों को मानने पीछे से लगे है ज्यादा लिखने को यहां स्थान नहीं है। आप जैन धर्म के छोटे २ प्रकरणों से भी अनभिज्ञ है, बड़े तो दूर रहे आपने लिखा हेमसूरि को मलधारगच्छी लिख दिया। सग्रहणी प्रकरण की अन्त को गाथा देखो। “मलहार हेमसूरीण, सीसलेसेण सूरिणारह्यं इत्यादि” लिखा है।

प्रबन्ध चिन्तामणिःकार आंचल मेरुतुंगाचार्य ने लिखा है। कुमारपाल राजा के समय ३ हेमसूरि थे तीनों ने कुमारपाल को धर्मोपदेश दिया था। फिर लिखा है वस्तुपाल, तेजपाल, द्रव्य वेपथर साधुओं का बंदनादि सत्कार छोड़ दिया तब वायडगच्छी दत्तसूरि ने सप्रमाण उपदेश देकर बंदनादि सब सन्मान शुरु कराया आपमें तो द्वेष और घमण्ड के सिवाय साधुपन का कोई गुण मालूम नहीं होता जैनधर्म में विख्यात होने का श्रेय बांधने के लिये उद्यम कर रहे हो।

जैसे किसी चालाक स्त्री ने अपने पति को लज्जित करने अपनी सास को कहा कि तुम्हारा बेटा धूर ग्रह के कारण मरने तक कष्ट पायगा। सो आप सिर मुड़ाकर काला मुँह कर गधे पर सवार हो शहर में घूम कर बेटे के सिर हाथ फेरो तो बच सकता है। माता ने एकान्त में इसलिये पुत्र से पूछा। तब उसने मा को समझा कर अपनी सास को यह सब विधि जा सिखलाई। सानू ने सोचा जेवाई मरा तो मेरी बेटा रांड होजायगी। तब उसने अपनी मा को तो अपने घर में लुपादी और उसकी सानू पर सब विधि बना जेवाई के घर शार। तब वह स्त्री मारे गहर के अपने पति से कहने लगी कि “देव बन्दी का चाला, सिर मुँहा मुँह काला” तब पति ने कहा “देव बन्दी की पत्नी इन्मा तेरोक मे सखिर स्त्री को शर्मिन्दा होना पड़ा।

आपके इस लेख से आपने अपने ही गच्छ के आचार्य को तथा खरतराचार्य को मिथ्यादर्शन सम्पन्न बना दिया। जरा तो खयाल रखना था। संवत् १७०० में दानों गच्छों में शिथलाचार नहीं था। राखी कौन बांधा करते हैं? सयम चारित्रधारी साधु साध्वियों न राखी बांधने की आज्ञा देते, न राखी लेते। इसलिये राखी के निमित्त दान देने की गण्य लिख डाली।

वर्तमान के जती त्रेषधारी तक राखी अभी कोई नहीं बांधवाता, आपकीं मालूम नहीं बुद्धिहीनपने का यह लेख है। अब ध्यान कर पढ़िये। संवत् १७०० के पहले का प्रमाण खरतरगच्छ में यह ४ गोत्र थे। जब दीकानेर नहीं बसा था उस समय भांडासाह ने सुमतिनाथजी का नामी मन्दिर बनवाया जिसकी प्रतिष्ठा संवत् १४३२ में हुई शिखर पर चढ़ते शिलालेख मौजूद है। यह मन्दिर खरतरगच्छ की निधा में है। यहां आपाद सुदि १४ वा पर्युपण्य में जब खतराचार्य वा उपाध्याय संघयुक्त चैत्य वंदन करने जाते हैं तब गोलछे हाजर हो तो गायन स्तवन गाते हैं न हो तो शक्रस्तव प्रणिधान दृढक कह कर अन्य विधि सपूर्ण करते हैं। इसी तरह कृकड़, चोपडा, एकम कोठारी हाजर हो तो १३ गवाड का पञ्चायती मन्दिर धीशान्तिनाथजी में गायन स्तवन होता है। इस मन्दिर के दहिने तरफ धीशान्तिनाथजी का मन्दिर सघत् सौले में पारख ने बनवाया उसमें पारखों के हाजर रहते स्तवन गाते हैं। सघत् सौले का बना ऋषभनाथजी का मन्दिर उसमें नाहटों के हाजर रहते। माहायोर स्वामी के मन्दिर में डागों की मौजूदगी में। बाज पूज्यजी के मन्दिर में घच्छापतों की मौजूदगी में स्तवन गाया जाता है। सघत् १५०० में बना नेमनाथजी का मन्दिर दोधरों के रहते स्तवन गाया जाता है इसलिये भांडासाह गुलेहा खरतरगच्छ था। दूसरा सघत् संवत् १६२६ में दीकानेर के दहे उपाध्याय खर पारखों के बनवाये मौजूद है। तीसरा सघत् १६२५ में

आपके इस लेख से आपने अपने ही गच्छ के आचार्य को तथा खरतराचार्य को मिथ्यादर्शन सम्पन्न बना दिया। जरा तो खयाल रखना था। संपत् १७०० में दानों गच्छों में शिथलाचार नहीं था। राखी कौन बांधा करते हैं? समय चारित्रधारी साधु साध्वियों न राखी बांधने की आशा देते, न राखी लेते। इसलिये राखी के निमित्त दान देने की गण्य लिख डाली।

वर्तमान के जती श्रेयधारी तक राखी अभी कोई नहीं बंधवाता, आपकी मालूम नहीं बुद्धिहीनपने का यह लेख है। अथ ध्यान कर पढ़िये। संपत् १७०० के पहले का प्रमाण खरतरगच्छ में यह ४ गोत्र थे। जब बीकानेर नहीं बसा था उस समय भांडासाह ने सुमतिनाथजी का नामी मन्दिर बनवाया जिसकी प्रतिष्ठा संपत् १४३२ में हुई शिखर पर चढ़ते शिलालेख मौजूद है। यह मन्दिर खरतरगच्छ की निधा में है। यहां आपाठ सुदि १४ वा पर्ययण में जब खतराचार्य या उपाध्याय सप्रयुक्त जैत्य घंटन करने जाते हैं तब गोलछे हाजर हो तो गायन स्तवन गाते हैं न हो तो शकलाय प्रणिधान दृष्टक काह कर शन्य त्रिभि सपूर्ण करते हैं। इसी तरह फूकाड, जोपडा, हाकम कोठारी हाजर हो तो १३ गघाट वा पञ्चा यती मन्दिर धीचितामणिजी में गायन स्तवन होता है। इस मन्दिर के दहिने तरफ धीशांतिनाथजी वा मन्दिर स्वदत्त खीले में पारवत ने बनवाया उसमें पारवती के हाजर रहते स्तवन गाते हैं। स्वदत्त खील वा दत्ता ऋषिनाथजी वा मन्दिर उसमें नाटो से हाजर रहते। मातादीर स्वामी से मन्दिर में डायो की मौजूदगी में। हाड पूरवती के मन्दिर में पत्तावती की मौजूदगी में स्तवन गायन होता है। संपत् १५०० में दत्ता नेमनाथजी वा मन्दिर दोधो से स्तवन गायन जाता है। इसलिये भांडासाह हां उ खरतरगच्छ का था। जुररा स्वदत्त स्वदत्त १२५३ में बीकानेर से दने पदाध रत पारवती से बनवाये मौजूद है। हां जुररा स्वदत्त १५५३

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विरक्तभाव समयमो मोतीचन्द्रजी साधू हैं ऐसे कम देखने में आये हैं। जमना के तीर पर बैठे हुए बगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा—उज्वल वर्ण गरीब गति, एक चरण बिच ध्यान ।
हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट कपट की खान ॥

तुमने ओसवालों के गोत्र महात्मा (मथेण) गृहस्थियों के लिखने का सबूत लिखा सच है कबूतर को तो कुआ ही दोखता है। कुँआलों को तो मथेणों से ही सब आश्रय मिला है सब मथेण हो चुके थे। जैसे “सुसिये ने पादा लोमड़ी की गवाह” “भोलणी तो गुमची को ही रत्न मानती है। लेकिन खरतराचार्यों के उन मथेणों से क्या ताल्लुक है ?

खरतराचार्यों के प्रतिबोधित ध्रावक जहां २ खरतर जती साधुओं का सहवास रहा वह तो खरतरगच्छ में ही है। सबत् १७०० के पीछे जहां सहवास नहीं रहा वह अन्य गच्छ में वा हूँदिये तेरह पथियों को वाह क्रिया देख उनको सामाचारी करने लग गये हैं तो भी अपने धमंदाता, उपगारी, खरतरगच्छ को नहीं भूलते हैं, और २२ समुदाय हुस्मचन्द्रजी के टांले के पूज्य श्रीलालजीने अपने व्याख्यान में मुक्तकण्ठ से घोकानेर में कहा था कि हे भाइयो ! तुम लोग धोजिनदत्तसूरि.जी के उपकार को मत भूलो। यदि वह तुम को राजपूत से ध्रावक नहीं बनाते और जीव हिंसा, मय मांस नहीं लुटाते तो हमको उपदेश देने का अवसर कहां मिलता ? खरतर ओसवालों की वंशावली महात्माओं के पास थी। प्रायः वह वीका नेर रांगडी के हुए में फर्मचन्द्रजी वच्छावन ने दगे से गिरवादी इसलिये खरतर महात्माओं के पास लिखने की वंशावली नहीं रही है। आपने लिखा सटेर गच्छ के महात्मा ने १२ गोत्र लिखने मो

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विरक्तभाव समयो मोतीचन्दजी साधु हैं ऐसे कम देखने में आये है। जमना के तीर पर बैठे हुए वगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा—उज्वल वर्ण गरीब गति, एक चरण विच ध्यान।
हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट कपट की खान ॥

तुमने ओसवालों के गोत्र महात्मा (मथेण) गृहस्थियों के लिखने का सबूत लिखा सच है कबूतर को तो कुआ ही दीखता है। कुँअलों को तो मथेणों से ही सब आश्रय मिला है सब मथेण हो चुके थे। जैसे "सुसिये ने पादा लोमड़ी की गवाह" "भोलणी तो गुमची को ही रत्न मानती है। लेकिन खरतराचार्यों के उन मथेणों से क्या ताल्लुक है ?

खरतराचार्यों के प्रतियोधित श्रावक जहां २ खरतर जती साधुओं का सहवास रहा वह तो खरतरगच्छ में ही है। संवत् १७०० के पीछे जहां सहवास नहीं रहा वह अन्य गच्छ में वा दूँडिये तेरह पधियों को वाह किया देख उनको सामाचारी करने लग गये हैं तो भी अपने धमंदाता, उपगारी, खरतरगच्छ को नहीं भूलते हैं, और २२ समुदाय दुस्मचन्दजी के टोले के पूज्य श्रीलालजीने अपने व्याख्यान में मुक्तकण्ठ से बीकानेर में कहा था कि हे भाइयों ! तुम लोग श्रीजिनदत्तसूरि:जी के उपकार को मत भूलो। यदि वह तुम को राजपूत से श्रावक नहीं बनाते और जीव हिंसा, मद्य मांस नहीं छुडाते तो हमको उपदेश देने का श्यसर फां मिलता ? खरतर ओसवातों की वंशावली महात्माओं के पास थी। प्रायः घर सीवानेर रांगडी के पुण में परमचन्दजी वज्रावत ने दगे से गिरवादी इसलिये खरतर महात्माओं के पास लिखने को जगारती नहीं रही है। आपने लिखा सटेर गच्छ के महात्मा ने १२ गोत्र लि

पालते हैं। वह सब अच्छे हैं। लेकिन इस समय जैसा विरक्तमात्र
सयमो मोतीचन्दजी साधू हैं ऐसे कम देखने में आये हैं। जमना के
तार पर बैठे हुए बगुले को देख मछली ने कहा:—

दोहा-उच्चल वर्ण गरीब गति, एक चरण विच ध्यान।
हम जाण्यो तुम साधु हो, निपट रूपट की खान ॥

तुमने श्रोत्रियों के गोत्र महात्मा (मर्यादा गृहधियों के निदानों
का सबूत लिखा सब है कबूतर को तो कुआँ ही दाखला है।
कुआँ को तो गोरों से हो सब आश्रय मिला है सब मर्यादा के
सुके पे। जैसे हंस ने पादा सोमड़ी की गवाह "सबूत" के
गुमची को हो सबूत है लेकिन खरनराचार्यों के इन सबूतों
से क्या ताल्लु है।

अंबड धावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन अम्बिकादेवी प्रगट हो, हाथ में स्वर्णमई देवाक्षर लिखकर कहा कि यह अक्षर जहाँ प्रगट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय का युग प्रधान जानना।

अंबड उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना फिरा। परन्तु अक्षर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप ने वासन्तेय हाथ पर किया और अक्षर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत् दासानुदासाश्च सर्व देवाः,
यदी य पादाञ्जतले लुठंति ।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,
युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड धली देश में कल्पवृक्ष के समान स यह जयवन्त रहे वही युग प्रधान श्रीजिनदत्तसूरिः हैं।

ऐसे अक्षर सर्व संघ ने पढ़े। अंबड अपना जन्म सफल मानता हुआ १२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुरु स्तुनकर यादशाह शकवर ने अत्यन्त प्रफुलित हो युग प्रधानपद गुरु को दिया। तथाचार्यों के तुल्य ही खरतराचार्य जिन-चन्द्रसूरिः जिनसिंहसूरिः का सपर तथा जहाँगीर दोनों पादशाहों ने सन्मान किया। इनसे पहले कई महीनों के लिये गुजरात के जेतवर्ग का जिजिया टेरस शङ्खर जाने वालों को हुदसुरत तक दत्त-माफ किया। तथा दोरविजयसूरिः को रुईसा फरमान द ५

अंबड धावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन अभिकादेवी प्रगट हो, हाथ में स्वर्णमर्द देवानर लिखकर कहा कि यह अक्षर जहाँ गट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय का युग प्रधान जानना।

अंबड उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना किरा। परन्तु अक्षर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप ने वासन्तेय हाथ पर किया और अक्षर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत् दासानुदासाश्च सर्व देवाः,
यदी य पादाब्जतले लुठन्ति ।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,
युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड़ धली देश में कल्पवृक्ष के समान सब यह जयवन्त रहे वही युग प्रधान श्रीजिनदत्तसूरिः है।

ऐसे अक्षर सर्व संघ ने पढ़े। अंबड अपना जन्म सफल मानता हुआ ६२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुण सुनकर पादशाह सफवर ने अत्यन्त प्रफुलित हो युग प्रधानपद गुरु को दिया। तथाचार्यों के तुल्य ही खरतराचार्य जिन-चन्द्रसूरिः, जिनसिंहसूरिः, पा सफवर तथा जहाँगीर दोनों पादशाहों ने सन्मान किया। इनसे पहले कई महीनों के लिये गुजरात के जैनधर्म का जिजिया टेरस सम्झर जाने वाली को छुट मुदत तब फरमाफ किया। तथा दोरविजरसूरिः को इर्दिसा फरमान द ५

श्रवण श्रावक युग प्रधानाचार्य के दर्शनार्थ गिरनारगढ़ पर उपवास कर एक ध्यान लगाया। तीसरे दिन श्रम्विकादेवी प्रगट हो हाथ में स्वर्णमई देवाक्षर लिखकर कहा कि यह अक्षर जहाँ प्रगट हों जिसका नाम और गुण सब पढ़ सके उसी को इस समय का युग प्रधान जानना।

श्रवण उस समय के आचार्यों को हाथ दिखाना फिरा। परन्तु अक्षर प्रगट नहीं हुए। जब जिनदत्तसूरिजी के पास आया तब आप ने वासक्षेप हाथ पर किया और अक्षर सबों के पढ़ने योग्य प्रगट हुए। उसमें यह लिखा था:—

यत दासानुदासाइव सर्व देवाः,
यदी य पादाञ्जलले लुठंति ।
मरुस्थली कल्पतरुः सजीयात्,
युग प्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥

अर्थ—दास के भी दास की तरह सर्व देवगण जिनके चरण कमलों में लौटते हैं। जैसे मारवाड़ थली देश में कल्पवृक्ष के समान स वह जयवन्त रहे वही युग प्रधान थी जिनदत्तसूरिः हैं।

ऐसे अक्षर सर्व संघ ने पढ़े। श्रवण अपना जन्म सफल मानता हुआ १२ व्रत गुरु से लिये इत्यादि।

गुरु गुरु सुनकर यादशाह शकवर ने अत्यन्त प्रफुलित हो युग प्रधानपद गुरु को दिया। तथा आचार्यों के तुल्य ही अक्षरतराचार्य जिन-चन्द्रसूरिः जिनसिंहसूरिः का शकवर तथा जहाँगीर दोनों यादशाहों ने सन्मान किया। इनसे पढ़ते कई महीनों के लिये गुजरात के जैनधर्म का जिजिया टेरस प्रशुभ्र जाने वालों को कुछ मुएत तक कर माफ किया। तथा एरविजसूरिः को इर्दिसा फरमान द ५

की फुसकी गन्ध दिये बिना कैसे रह सकती है। रतप्रभसूरी नेपाल चले जाते तो साँप काट का विष उतारते क्रोडा मनुष्य को ओस वाल अपने गच्छ के बना डालते एक का विष ओसिया में उतारने पर इतने लाखों को ओसवाल बनाना तुमने लिखा है। इसलिये पहाड जलता दीखा पाँव जलता नहीं दीखा। गयवरचन्दजी तो खरतर को असत्य ठहराने पोपांवाई का सा हिसाब करने लगे। "राज पोपांवाई का लेखा राई राई का"।

पत खलसर्वपमात्राणि परछिद्रानि पश्यति ।
भात्मनो विल्वमात्रानि पश्यन्नपि न पश्यति ॥

अर्थात् दुष्ट आशय वाला मनुष्य पराये छिद्र सरसव मात्र को भी देखता है और अपना धिल जितना बड़ी गुफा को देखता हुआ भी नहीं देखता है।

जयपुर में इस घक्त भी साँप के विष उतारने वालों के घर हैं। साँप के काटे हुए मनुष्य के सामने घाजा घजा कर साँप के पवाड़े गाते हैं तब साँप काटे हुए मनुष्य के अङ्ग में साँप घूम २ कर उसी मनुष्य के मुख से अपना वैर विरोध फलता है। किसी समय तो उस साँप को भी गुला लेते हैं और विष उतार देते हैं। गंधनकुल वाले साँप का दशवैकालिक सूत्र में लिगे मुजब अगंधनकुल वाले का विष नहीं उतरता। साँप बिच्छू के विष उतारने वाले सभी कर मौजूद हैं। हैदराबाद के बादशाह महबूबखली ने हजारों मनुष्यों का विष उतारा है। पहाँ के रहने वालों में से किसी को भी पूतुकर निक्षय करलो।

शासन देयता दत्त पालसेप से सर्ग के दाजे, राज
स्थापन किया विजय गंग का महात्तर दिवाकर भावकादि

एदि चरित्रानुवाद स्तोत्र सय के उत्थापक सम्यक्त्व रहित सिद्ध हो। "गये थे मियांजी राजा छुडाने नमाज़ की गले में अ.ई" "दोनों काँहरे जोगिया मुद्रा और आदेश" सम्यक्त्व जाने से चारित्र भी नहीं रहता।

जैन सूत्रों में २८ लब्धि का बड़ा महात्म्य कहा है सय रोगों का नाश होना। नव पद महात्म्य पर श्रीपालादि ने सात सौ कोटियों का कोट मिटारा ऐसा मन कह बैठना। साधु जानते हैं लेकिन करते नहीं। मुनिचन्द्र चारित्रधारी ने लिद्ध चक्र यन्त्र का सर्व स्वरूप मयणा व श्रीपाल को सिखलाया। करना, कराना, अनुमोदना एकसा है। फिर २० स्थानक पदारावन में = महाप्रभाविक का पदाराधन क्षाता सूत्र में कहा और २० स्थानक चरित्र में लिखा है। निमित्त = ज्योतिष, स्वरोदय, शकुन, सामुद्रकादि जिनधर्म की प्रभावना दिवाने १४ पूर्ववर भद्रवाहु स्वामी ने बगहभिहर ब्राह्मण को परास्त करने के निमित्त आगे होने वाली वार्ता कथन करी। बगहभिहर मरव्यतर हो जैन सघ को कष्ट देने लगा तब धरणे द्र पञ्चाघतों का आह्वान कार सांप विष दूर करने रू उदसग्ग हरस्तोत्र रच कर दिया।

तुरमणी नगरी में कालिकाचार्य ने दत्त प्रोहित राजा को निमित्त घतलाया, जिनधर्म का महात्म्य प्रगट किया। कवि प्रभावक सिद्धसेन दिवाकर कल्याण मन्दिर स्तोत्र रच महाकाल वृत्त अयपन्ती पार्वनाथ रुद्रलिंगांतर्गत फाडके निकाल धिक्मादित्य राजा को जिनधर्मों बनाया। स्वर्णसिद्धि दे सघत्सर चतवाया। मानतुंगाचार्य को बुद्ध भोज राजा ने जिनधर्म का चमत्कार देखने ब्राह्मणों के फटने से ४८ पन्धन घांघ ४८ ताते लगा बन्द किया। भक्तामर स्तोत्र ४८ काव्य रच पन्धन और ताते तोड़ सभा में साथे जिन धर्म की महिमा प्रगट की।

एदि चरित्रानुवाद स्तोत्र सब के उत्थापक सम्यक्त्व रहित लिख
 हो। "गये थे मियांजी रोजा छुडाने नमाज़ की गले में अ.ई" "दोनों
 काँटे जोगिया मुद्रा और आदेश" सम्यक्त्व जाने से चारित्र भो
 नहीं रहता।

जैन सूत्रों में २८ लब्धि वा बड़ा महात्म्य कहा है सब रोगों का
 नाश होना। नव पद महात्म्य पर श्रीपालादि ने सात सौ कोटियों
 का कोट मिटा या ऐसा मन कह बैठना। साधु जानते हैं लेकिन करते
 नहीं। मुनिचन्द्र चारि-धारी ने लिख चक्र यन्त्र का सब स्वरूप
 नयण व श्रीपाल को सिखलाया। करना, कराना, अनुमांदना
 एकसा है। फिर २० स्थानक पदारावन में = महाप्रभाविक का पदा-
 राधन दाता सूत्र में कहा और २० स्थानक चरित्र में लिखा है।
 निमित्त = ज्योतिष, स्वरोदय, शकुन, सामुद्र्यादि जिनधर्म की प्रभा-
 पना दिखाने १५ पूर्व वर भद्रवाहु ग्यामी ने बगएभिहर द्राक्षण को
 परास्त करने के निमित्त आगे होने वाली घाती कथन करी। बगए
 भिहर मरव्यतर हो जैन सभ को कष्ट देने लगा तब भ्राणेद्र पया
 पती का आह्वान कार सांप निय दूर करने का उरखन्य दरस्तोत्र
 रच कर दिया।

तुम्हली नगरी में कालियाचार्य ने एक प्रोहित राजा को नि-
 मित्त पतलाया, जिनधर्म का महात्म्य प्र ७ वि.या। विवि प्रभावक
 मिलभेन दिवाहर पतलाय मन्त्रर स्ताप एक महात्म्य त कय
 पती पार्श्वनाथ = प्रलिंगांतर्गत पाकये निवात विम कालिय वा।
 पाचार्य को दूत ने क राजा ने जिनधर्म का महात्म्य दूत को दया।
 के वदन से ५५ प पत की ३५ का लता: दार भे। अल नर
 लोप ५८ वाप एक महात्म्य और ताने काय स्तोत्र के कहे
 जिन धर्म की शक्ति का महात्म्य की।

जैसे तो उस समय कृष्ण में भी गिरी हुई थी त्योंही होते तो ईश्वर विरुद्ध क्यों मिलता। पतंजलसूत्रिः, जिनेश्वरसूत्रिः ने तो चैत्यवासियों को घोरराग का मार्ग दर्शाया। राजादि सभासदों ने खरतर विगडदिया तो भी उन्होंने हम में कुछ नरुद न किया, कोय को प्राप्ति कराने में उनको हर्ष था। जिनचन्द्रसूत्रिः ने चैत्य रागशाला ग्रन्थ उनको शिक्षा देने को रचा। अभवदेवसूत्रिः ने मयश्चक्र की टीका की और कई ग्रन्थ रचे। वल्लभसूत्रिः ने सद्यष्टादि सौ ग्रन्थ भारत व सरस्वत में रचे। जिनदत्तसूत्रिः ने सदेह वंलावली चर्चरी आदि ग्रन्थ रचे। इन ग्रन्थों के उपदेश सुन २ जैन सद्य ने चैत्यवासियों से नफरत की तब चैत्यवास बहुतों ने हड दिया। खरतराचार्यों का उपगार दुर्गति का कारण चैत्यवास हडाने का असौम लाभ का कारण दुश्चा। उस उपगार को कृतघ्नी है। उलटा अर्थवाद द्वेष बुद्धि से लिखा है।

ऐ इन्साफी लोगों ' तुम दहो चैत्यवासी साधु वेधारी अच्छा कार्य करते थे या पुरा। खरतराचार्यों ने कुछ विगाड किया हो तो कहिये। सांप का दूध पिलाना प्रिय वृद्धि का हेतु होता है, इसमें न दूध का दोष, न पिलाने वाले का किंतु सांप का यह स्वभाविक गुण है। जिनेश्वरसूत्रिः को तथा विद्वान सभ्यपत्व सप्तति ग्रन्थ में महा प्रभाविक लिखा है टुक देखिये।

जब जिनेश्वरसूत्रिः पांच सौ साधुओं के संग विचरते हुये मालवा देश की उज्जैन नगरी में पधारे तब राजा भोज के नवरत्नों में परिडत धनपाल ब्राह्मण और उसका छोटा भाई शोभन व इनका पिता वह जिनेश्वरसूत्रि के पिता जो काशी के राजा के पुरोहित था वह इनका सगा था, इस पूर्व परिचय से गुरु पास आने पटशास्त्री, अतिशयवंत समझ के अपने घडेरों का एक काव्य गुरु के सन्मुख धर कर बोला, इसका अर्थ हमारे



तो योग विद्या के साधक थे, उनमें अर्चित शक्ति का होना असम्भवित नहीं। मैस्मरिज़म वाले कहते हैं कि २० वर्ष अखण्डितपने किन्ही प्रकार से भी शील खण्डित नहीं करे उसके यह याग सिद्धि साधन से अद्भुत सिद्ध हो। ४० वर्ष पूरा शील पालने से पूर्ण सिद्धि हो।

दोहा-शीले सुरमानिध करे, शीलं यश सोभाग।

शीलं अरि करी केसरी, भय जावे सब भाग ॥

जैन शास्त्र कहता है कि आजन्म ब्रह्मचारी जिनदत्तसूग्निः आदि खरनरादि गच्छाचार्य हुए शील पालने वाला बचन लिख होता है। लेकिन इसका पालक यथाधपने से फाड़ों मनुष्यों में भी एक ही होता है। मरे लिखने में अग्रण किये हुए इतिहास में काल अथवा में कहीं पृष्टि रही होगी, क्योंकि एक पिता के ४ पुत्र पिता के मुख से सुनी हुई बात को अलग २ पैठ उच्य चारों लिखते हैं तो कुछ न कुछ पेरफार रह ही जाता है। सब असत्य नहीं होता। समुद्र जैसे बुद्धिमान पूव के शान व लें ने उच्य सूत्र लिखा था तब हृप्रस्यता से १०३ व.र्त्ता में तफावत ३२ सूत्र में ही होगया है। अतिद्वय शान पिना निश्चय एक वार्त्ता कौन कह सकता है। प्रकरणों में भी परस्पर भेद लिखा मालूम देना है। उन दानों में कुछ न कुछ अरेका है। असत्य कहने से मिथ्यात्व जाना है। रथाहाद् ग्याय जाने वह वह धुती इनकी अपेक्षा लगा सकता है।

बालिकाध्याजी ने शासन देवता दत्तदान चूर्ण से हटों का पताया रत्नं वा विद्या रक्षा प्रवार मलिप्र.रों धीजिनचन्द्रगि ने कर दिखलाया है। लेकिन मने इनने प्रमाण लिख दिखाये है। आप का उभाय तो इस ददान मु-य है जैसे —“बुद्धे वा दुन वा दान वा भोगतो में स्वार्थ बरने का तये १२ वर्ष क्ली निदाना का लिख देसी ही देदी पार”। जैसे एक निखाल ईसलमेर पाटे बरने है-

नहीं मिटती भगवान वीर कह गये थे। कलङ्की और उपकलङ्की पंचमारक मे धर्म विध्वंस करने वाले अनेक होंगे। मेरे सन्तानी युगप्रधानाचार्य २००४ तेवीस वेर धर्म का उदय करेगे जो काम होना था वह खरतराचार्यों ने किया भी है। जैसे जोधपुर नरेश मानसिंहजी खरतरगच्छ के वेगड़शाखा के राज्य गुरु जिन्हों को दश हजार सालियाने की आमदनी के गांव और चवरी लारे रुपया है। उन हरचन्दजी जती पर कारणवश बहुत कुपित हुए कई मुत्सदियों को प्राण रहित किये तब यांकीदासजी कविराज चारण ने पहले कही हुई कविता नरेश को सुनाई।

जयचन्द साथे जती हाड़ गाले हे माले ।
 सेतरा मरी सरव गई धर पाछी वाले ॥
 रायपाल राय ने दीनपति गह्यो दिखायो ।
 कन ऊपर कर कृपा असंखदल अलग उडायो ॥
 सूर ने त्रिया मेली सरस किया इसा वड २ कजां ।
 खरतरेगच्छ हुआ इसा कदेन विरचो कमधजां ॥

यह सुन शाखोक्त पढी यात को याद कर हरचन्दजी को प्राण दण्ड की सजा नहीं दी। सूरसिंहजी नरेश ने कही "गुरां साहय अब मन्त्र शक्ति प्रगले जतियो मुजय आपमें नहीं होगी।" तब जती ने कहा आप क्या देखना चाहते हो? कहा गुरां वशीकरण। फिर जती ने काजल मन्त्र के दिया। कारणवश राजा कहीं कूझा देखने गये वहां अकस्मात घए काजल कुए में गिर गया। फिर रात को उस कुए में बसने वाली पोखतादेवी उल काजल के प्रभाव से राजा के पास आ पहुंची। राजा ने प्रभात समय खरतर मन्त्रशक्ति जानकर बहुत ही स्तुति की। यह घाता पृद्धोच में है। ऐसे समस्कार खरतरगच्छ वालों का इत्य ९

नहीं मिटती भगवान वीर कह गये थे । कलङ्की और उपकलङ्की पंचमारक मे धर्म विध्वंस करने वाले अनेक होंगे । मेरे सन्तानी युगप्रधानाचार्य २००४ तेवीस बेर धर्म का उदय करेंगे जो काम होना था वह खरतराचार्यों ने किया भी है । जैसे जोधपुर नरेश मानसिंहजी खरतरगच्छ के बेगडशाखा के राज्य गुरु जिन्हों को दश हजार सालियाने की आमदनी के गांव और चवरी लारे रुपया है । उन हरचन्दजी जती पर कारणवश बहुत कुपित हुए कई मुत्सदियों को प्राण रहित किये तब बांकीदासजी कविराज चारण ने पहले कही हुई कविता नरेश को सुनाई ।

जयचन्द साथे जती हाड गाले हे माले ।
सेतरा मरी सरथ गई धर पाछी वाले ॥
रायपाल राय ने दीनपति गह्यो दिखायो ।
कन ऊपर कर कृपा असंखदल अलग उड़ायो ॥
सूर ने ब्रिया मेली सरस किया इसा वड २ कजां ।
खरतरेगच्छ पुआ इसा कदेन विरचो कमधजां ॥

यह सुन शास्त्रोक्त पढी बात को याद कर हरचन्दजी को प्राण दण्ड की सजा नहीं दी । सूरसिंहजी नरेश ने कही " गुरां साहब अब मन्त्र शक्ति भगले जतियों मुजय आपमें नहीं होगी ।" तब जती ने कहा आप क्या देखना चाहते हो ? कहा गुरां वशीकरण । फिर जती ने काजल मन्त्र के दिया । कारणवश राजा कही कृआ देखने गये वहां अकस्मात घट काजल हुए में गिर गया । फिर रात को उस हुए में बसने वाली पोखतादेयी उस काजल के प्रभाव से राजा के पास आ पहुंची । राज ने प्रभात समय खरतर • • • मन्त्रशक्ति जानकर बहुत ही स्तुति कीं । यह घातर्ता पूर्वोक्त में है । ऐसे खन्कार खरतरगच्छ वालों का इन्त्य -

चर्पातें होगई है । पुत्र बोला बिना देखे मैं नहीं मानता । इसी तरह नास्तिकमती दूसरे खरतरगच्छ वालों के लिखे प्रत्यक्ष प्रमाण बिना पीछली घातों को इस मैडक की तरह नहीं मानते । समुद्र के मैडक के मुकाबले कुप का मैडक अपना दोलतखाना समुद्र से बड़ा दब-लावे तो ताःजुब क्या ? क्योंकि रत्तागर सागर के गुणों को उन्होंने नज़रो से नहीं देखा इसलिये तुमने खरतरगच्छ के मग्नसागणों को मीणा, भील अधम जाति के लिखा, जातिमद, व गोत्रमद के गरूर में आकर सो उसके जवाब में उन्होंने अपनी जाति राजपूतों में से सिद्ध करदी और वाकै है भी ऐसा । जैपुर का इलाका प्रकृत इन जाति वालों से कछावों ने लिया था । नाहरगढ और इतरे जगहों पर अभी भी इनके ताल्लुक है । रैर थोडी देर के लिए इनके मुताबिक मीणे भील मानलो । आपका गोला दवाने लिखते है कि जब तू और मैं वाईस समुदाय में पढ़ने के लिये चले थे और शामिल रहते थे तब मेरा भूँठा बच्चा हुआ था जो तूने वक्त खाता था । यह घातर्ता प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध है ।

जैन सूत्र में लिखा है एक साधु ने एकाशन का पत्र लिखा जो आहार पाणी कर चुका है उस वक्त सभोगी हुन्ने मरने के लिये से आहार बन्द गया । परठने में ज्यादा पाप होना है इसलिये वह एकाशन किया । आ साधु ब्या लेवे तो पदकाल में मरने नहीं इसलिये साधु के एकाशन पत्रपत्रान में पाणिपूत्र लिखना गणधरों ने दिया है । धायरू के लिए नहीं है । जैन सूत्र में लिखा है गयवरचन्द्रजी को है बुद्धिमानों ने इनके लिखे पत्रों का मानोगे । " कैसा पाये सब, वैसा रहें सब । कैसा बोलें सब वैसी बोले घाती । " यह पद्ययत लोग प्रसिद्ध है ।

ऐसे मन वाले ने ऐसी घातों दाना लिखे हैं । आपचार्यों के लिये लिखी है, तब "मद मते रा कुर्माइ" से प्रत्युत्तर लिखना पना ।

जिन्होंने संवेगपक्ष जिनधर्म का भण्डा पञ्चाय में खडा कर दिया
 र्यसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपों को
 अस्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे । जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिभिर
 भास्कर, तत्त्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के
 जवाब मे चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना
 की । गच्छ कदाग्रह का राग करना और बिना है । अपनी मा को
 कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं
 छोड़ सकते हैं । दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं
 रचे हैं ।

दोहा-आड तिरंती देखके, तू क्यों डूबो कग्ग ।

होड़ पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है । गृहस्थों के घर से माल मलीदा
 लाने से आधाकर्मी आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है,
 वह लेने से शिर के बाल उखाडने पैदल घूमने मात्र वारा क्रिया
 दिवाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्मी साधु होसकता है
 प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है चांटी
 चांटी का रुपया से अजाण ठगा जाता है । तुमने लिखा रोटियों के
 दो पछेवडी के वास्ते खरतरगच्छ में ओसवालों को लिया है ।

दादा साहय की बदौलत खरतरगच्छ वालों को रोटी की क्या
 कमी है । जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है । जती व्याप्यानादि
 अनेक धर्म कार्य करवाते है तब वर्ष भर में एक वा दो रुपया गृह-
 स्थ देता है । तुम तो पुस्तक लिखाने, टपवाने के बदाने पटित से
 गुप्त साजा रख हजारों रुपया गृहस्थों से लूटते हो । जती उघडा
 कुआ है इसमें कोई नहीं गिरता । आप त्यागी घास से टके हुए कुए
 के जैसे हो । इसमें मनुष्य गिर जाता है, जाहिर परित्र तो पगुजों

जिन्होंने संवेगपक्ष जिनधर्म का भण्डा पञ्जाय में खडा कर दिया
 अर्यसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपो को
 अस्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे । जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिभिर
 मास्कर, तत्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के
 जवाब मे चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना
 की । गच्छ कदाग्रह का राग करना और विना है । अपनी मा को
 कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं
 गूँड सकते हैं । दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं
 चे हैं ।

दोहा-आड तिरंती देखके, तूं क्यों डूबो कग्ग ।

होड़ पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है । गृहस्थों के घर से माल मलीदा
 लाने से आधाकर्मी आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है,
 वह लेने से शिर के बाल उखाडने पैदल घूमने मात्र वाए क्रिया
 दिखाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्मों साधु होसकता है
 प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है खांटी
 चांदी का रुपया से अजाण ठगा जाता है । तुमने लिखा रोटियों के
 थो पछेवड़ी के वास्ते खरतरगच्छ मे ओसवालों को लिया है ।

दादा साहब की बदौलत खरतरगच्छ वालो को रोटी की क्या
 कमी है । जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है । जती व्याख्यानादि
 अनेक धर्म कार्य करवाते हैं तब वर्ष भर में एक वा दो रुपया गृह-
 स्थ देता है । तुम तो पुस्तक लिखाने, हपवाने के यद्दाने पटित से
 गुप्त साजा रख हजारों रुपया गृहस्थों से लूटते हो । जती उघडा
 कुआ है इसमें कोई नहीं गिरता । आप त्यागी घास से ढके हुए हुए
 के जैसे हो । इसमें मनुष्य गिर जाता है, जाहिर परित्रए तो पगुशों

जिन्होंने स्ववेगपक्ष जिनधर्म का झण्डा पञ्जाब में खड़ा कर दिया। अर्यसमाजी दयानन्दजी के जिनधर्म पर किये हुये आक्षेपों को अस्त करने के लिये कई ग्रन्थ रचे। जैनतत्वादर्श, अज्ञानतिभिर गरकर, तत्त्वनिर्णय प्राशाद फिर अमेरिका वालों के सो प्रश्नों के जवाब में चिकागो प्रश्नोत्तर इत्यादि लिख जिनधर्म की प्रभावना की। गच्छ कदाग्रह का राग करना और घिना है। अपनी मा को कोई भी डाकन नहीं कहता सर्वथा राग सराग सजमी भी नहीं श्रुंढ सकते हैं। दुपमकाल है तुम्हारी तरह निन्दक ग्रन्थ नहीं लिखे हैं।

दोहा-आड तिरंती देखके, तू क्यों डूबो कग्ग।

होड पराई जे करे, तले सिर ऊपर पग्ग ॥

तुमने तो यह हाल किया है। गृहस्थों के घर से माल मलीदा लाने से आधाकर्मी आहार पानी भक्तिवन्त के घर से मिलता है, यह लेने से शिर के बाल उखाडने पेदल घूमने मात्र वाप किया दिवाने से क्या कोई मुक्ति का साधक जिनधर्मी साधु होसकता है २ प्रवचन माता १० यतिधर्म पालने वाला ही मुक्त होता है चांदी चांदी का रुपया से अजाण ठगा जाता है। तुमने लिया रोटियों के वां पछेवडी के चास्ते खरतरगच्छ में सोसवालों को लिया है।

दादा साहब की बसौलत खरतरगच्छ पालो को रोटी दो क्या कमी है। जभी तो आपने यह ढोंग जमाया है। जती प्यार्यानादि अनेक धर्म कार्य करवाते हैं तब धर्म भर में एक वा दो रुपया गृहस्थ नेता है। तुम तो पुस्तक लिखाने, टपवाने से पढ़ाने पढित से गुप्त साजा रण एजारो रुपया गृहस्थों से लूटते हो। जती कुशा है इसमें कोई नदी गिरता। आप त्यागी पास से टपे हुए के जैसे हो। इसमें मनुष्य गिर जाता है, जादिर परिग्रह ता .

था। तुमने भट्टीक श्रावकों को अपने मायाजाल में फँसाने को एक जोधपुर के कागज़ की नकल लिखी है इसकी अन्त्यता का प्रमाण लिखता हूँ। कुँअल्लगच्छ के श्रीपूज्य सिद्धसूरि:जी की सम्मति से जती सुजाणसुन्दरजी ने फलोदी की अदालत में लूणावतों पर दावा किया कि तुम हमारे हो दूसरे लोगों को मत मानो। आखिर मैं कर्नल सर प्रतापसिंहजी साहब बहादुर व श्रीमान महाराजा सरदारसिंहजी साहब बहादुर ने हुक्म फरमाया कि कुँअल्लगच्छ का कोई हक लूणावतों पर नहीं दिल चाहे जिसको माने। वह लूणावत अभी भी अन्य २ गच्छ वालों में ही है।

कहिये आपके हाथ की लिखी हुई जोधपुर नरेश ने क्यों नहीं सिकारी अगर सच्ची होती तो सिकारे बुद्धिमान आपकी इस नकल को सच्यों कैसे मानें ? क्यों कागज काले किये। डूबता मनुष्य जैसे फाफटे मारे वैसे क्यों भूँटे फाफटे मारते हो। एक गोत्र के कई एक घर पूर्वोक्त लिखे कारण से कुँअलों को मान रहे हैं। अजमेर, मेड़ते के वैद मुहन तप्यों में चूरु में लोगों में घोड़े चर्दमान वैद फानासर गंगाशहर रत्तगढ मुशिदावाद बगैरह के लोग खरतरगच्छ में हैं। नामदी तो खुदा ने दी है भूँठी मार २ पुकारा करो। ऐसे भूँटे लेख का जैनजाति महोदय नाम की किताब लिखोगे।

तुमने लिखा रत्तप्रभसूरि: ने दो रूप बना पर सोसियां और कोरटनगर की समकाल में प्रतिष्ठा परी। जब ऐसी शक्ति वाले थे तो बहुरूपिशापन से सारे भारतभर में भूम पर कुँअल्लगच्छ के सच्यों का सोसवाल क्यों नहीं बना टाला। फिर इस समय तुमदो भूँटे लोगों की किताबें नहीं लिखनी पडती। 'दीपक तने संधेरा' 'सय क्या हो उस पक्ष दाप जैसे। रत्ताणगीन रत्तप्रभसूरि: के पास नहीं थे नहीं तो पुद्द सत्ताए ऐसी जरूर देंते। पद तो हुए २

न तो रत्नप्रभसूरि ने १२ गोत्र के ओसवाल बनाये न ओसियां के मन्दिर को प्रतिष्ठा की प्रशस्ति से सिद्ध है।

प्रश्न विधवा के गर्भ रहे वह जाति व इज्जन के डर से बाल हत्या करे उस हत्या का पाप गर्भ रखने वाले पुरुष तथा स्त्री दोनों को लगे वा अकेली स्त्री को ?

प्रश्न-पञ्च महाव्रत उच्चार कर चौथा अव्रत प्रच्छन्न सेवे अपनी निश्रा में कपट से गृहस्थ पास धन रखे, नग्वाहन (डोली) पर चढ़े इनको केवल ज्ञानी साधु कहावा नहीं ?

इनका खुलासा उत्तर अपने अनुभव का पीछे शास्त्र का पाठ बताना यदि आप कहोगे सूत्र प्रकरणादि क्या तुम नहीं पढ़ते हो। खुद देखलो इस पर तो यह मिसला है किसी ने पूछा ठाकुर सा-हब परड कितने व्यंत व्यावे है ठाकुर ने जवाब दिया ओधन धाखोडा कोय नहीं।

मुझे तो आप चिकित्सक लिखा है। मुझे इन बातों की क्या खबर आप ता हरदम पोथी से ही काम रखने वाले हो। आपही उसको जानने वाले हो इसलिये पूछा है।

हे सज्जनो ! यह मेरा लिखना महाजन मुक्तावली के लेख के बरगडन कर्त्ता गयवरचन्दजी कुँअलागच्छ वाले के लिये है न कि प्रौर के लिए। आपको अब मेरा लिखना है कि, यदि आपको शा-स्त्रार्थ करना है तो धीकानेर आज्ञाइये। यहां ज्ञान भंडारादिका सब साधन भी है। चार विद्वानो को मध्यस्थ रख शास्त्रार्थ करले फिर खै खरतरगच्छाचार्य श्रीजिनदत्तसूरिः आदि के प्रतिबंधे ध्यावक है वा नहीं सच भूठ का निवेडा होजायगा। घर बैठे मोतियों का बोक पूरते को कौन रोक सकता है ? आपके लिये लेख अपने एदि

रागियों को मना दोजिये । जैसे किसी ने अपनी तावेदारनी से कहा "कह रे छोगी झांने ठाकुर", तावेदारनी ने कहा मेरे नां आप ठाकुर ही हो हजार घेर कहलालो लेकिन आम दुनियां ठाकुर कहे जब सब्बे ठाकुर हो सकोगे । मेरा न कुँअलगेच्छ से कोई द्वेष है न कोई आपसे ।

॥ दाहा ॥

जंस को तैचा मिला, वमण को नाई ।

उन दिखाई आरसी, उन तिथि वार बताई ॥

असत्य सवाल का सत्य जवाब लिखा है, दूर बैठे मीयां मिट्ठू बने हो । ऊंचा गिरनार तो आवू को कम ऊंचा मत समझना । ऐसी लाय कां है जिसको कोई दीपक लेकर देखे ।

यदि आप फिर अक्षेप करोगे तो फिर लिखने को तय्यार हूँ । जैसे शैरू ने देवी को कहा था कि मठ में पड़ी २ पादी है साहू के धके नहीं चढी है । मोठ के भरोसे मिर्च मत चबा जाना । भक्तों के भरोसे मडो नहीं है अन्दर ठाकुरजी विराज रहे हैं ।

यदि आप यहाँ शास्त्रार्थ करने आजाओगे तो यह मिलला बन जायगा । "चावेजी चले छुवेजी बनने, निज के दां खोकर दुव्वेजी बन मुँह लेकर घर आना पड़ा" । यह न कर दिखावें तो खरतर मत समझना । यह वही खरतरगच्छ है जो कि आपके बड़कों में पाठण में बिताई थी । डांग टूटी तो भी डंकरे जोगी तो अब भी है, हाथी गिरा हुआ भी गधे से ऊंचा ही होता है ।

यत परस्परानि मर्माणि भाषन्ते अधमानरा ।

ते नराविलयंगान्ति बल्मीकोदर सर्पवत् ॥

अर्थात् परस्पर के मर्म अधम मनुष्य कहते हैं वह दोनों विलय होते हैं। वस्त्रों के रहने वाले और उदर में रहने वाले सांप की तरह।

हमारी तरफ से प्रथम कोई कुँअलोगच्छ की वा आपकी विरुद्धता का लेख नहीं निकला। आपने दादा साहब का मन माने जो लेख लिख कर जाहिर किया।

दोहा-आँछे नर के पेट में, खट न मोटी बात।

आधमेर के पात्र में, कैसे सेर समात ॥

भरिया वह झलक नहीं, झलकत वह आधा।

मनुष्यों की वह पारखा, बाला और लाधा ॥

गयवरचन्द्रजी कर मगरा, लख लिखा सब अमला।

खरतर सेना भिड न काइ अंत विचारा कुंभला ॥

खरतर भट्टारक पति, जिन चारित्र सुरीन्द्र।

धीकानर शुभ नगर से, गंगासिंह नगीन्द्र ॥ १ ॥

खस्तगच्छ धा सध न, सुभाऊ अनुमति दीन।

सौरन श्रीजी साधा, सजम में लयलान ॥ २ ॥

उगणांसय तयासिये, पाध्व ज म के दिज।

असत्य जाल क काटकर, कर दाना लज भिज ॥३॥

है रुपा गुरुराज की, जग में है उयदार।

मह पाठक उत्तर लिजा, र.मगण्णि प्रह्लासा ॥४॥

इति धीकुँअलोगच्छी गयवरचन्द्र (दानुन्दर) जी एत

असत्याक्षप निराकरण सम्पूर्णम् ॥